भारतीय राजनीति का वैचारिक आधार: एकतावाद और अनेकतावाद

डॉ. प्रशांत कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, तिलकधारी पी. जी. कॉलेज, जौनपुर

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय राजनीति के वैचारिक आधार को 'एकतावाद' और 'अनेकतावाद' नामक दो मूलभूत धाराओं के माध्यम से विश्लेषित करता है। औपनिवेशिक काल से लेकर आज तक भारतीय राजनीतिक विमर्श इन्हीं दो वैचारिक ध्रुवों के इर्द-गिर्द आकार लेता रहा है। एकतावाद यह मानता है कि भारत एक सांस्कृतिक, सभ्यतागत और ऐतिहासिक इकाई है जिसकी आत्मा एक है, जो कि सनातन परम्परा में निहित है। दूसरी ओर अनेकतावाद यह मानता है कि भारत अनेक भाषाओं, पंथों, नृजातियों और क्षेत्रीय पहचानों का एक संग्रह है, जहाँ राजनीतिक-प्रशासनिक एकता ही वास्तविक बंधन है। यह शोध पत्र इन दोनों विचारधाराओं के ऐतिहासिक उद्गम, प्रमुख प्रतिनिधियों, दार्शनिक आधारों, आपसी संघर्ष और वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में उनकी प्रासंगिकता का व्यवस्थित विवेचन करता है। साथ ही यह जातिवाद, क्षेत्रवाद और साम्यवाद जैसी उप-विचारधाराओं की भूमिका को भी इसी व्यापक ढाँचे में समझने का प्रयास करता है।

प्रमुख शब्द: एकतावाद, अनेकतावाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, पंथनिरपेक्षता, भारतीय राजनीतिक विचारधारा, औपनिवेशिक प्रभाव, हिंदुत्व, बहुलवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद

प्रस्तावना

भारतीय राजनीति की समझ तभी पूर्ण हो सकती है जब हम उसके वैचारिक आधारों तक पहुँचें। भारत में आधुनिक राजनीतिक चिंतन का उद्भव 19वीं शताब्दी में हुआ, जब ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने भारतीय समाज को एक नई वैचारिक चुनौती के सामने खड़ा किया। इस संघर्ष में भारतीय बुद्धिजीवियों, समाज-सुधारकों और राजनेताओं ने दो भिन्न-भिन्न दिशाओं में विचार किया। एक वर्ग ने कहा कि भारत एक प्राचीन सभ्यता और संस्कृति है जिसकी आत्मा एक है; दूसरे वर्ग ने कहा कि भारत अनेक भाषाओं, धर्मों और जातियों का समुच्चय है जिसे आधुनिक पश्चिमी विचारों से परिष्कृत करने की आवश्यकता है।

प्रस्तुत शोध पत्र में लेखक ने इन दो धाराओं को क्रमशः 'एकतावाद' (Unitarianism/Cultural Nationalism) और 'अनेकतावाद' (Pluralism/Secular Liberalism) के नाम से वर्गीकृत किया है। ये नामकरण केवल वर्णनात्मक नहीं हैं, बल्कि ये दोनों विचारधाराओं के मूलभूत दार्शनिक आधार को भी प्रकट करते हैं। एकतावाद का आधार यह विश्वास है कि विविधता के बावजूद भारत में एक सांस्कृतिक और आत्मिक एकता विद्यमान है; जबकि अनेकतावाद का आधार यह विश्वास है कि भारत की विविधता ही उसकी मूल पहचान है और इसे संरक्षित करना राज्य का प्राथमिक दायित्व है।

Published: 17 April 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i4.45685
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

यह शोध पत्र इन दोनों विचारधाराओं के ऐतिहासिक उद्भव से लेकर उनके समकालीन स्वरूपों तक का क्रमिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही, यह उन उप-विचारधाराओं का भी परीक्षण करता है - जैसे साम्यवाद, जातिवाद और क्षेत्रवाद - जो इन दोनों मुख्य धाराओं से संवाद करती हैं अथवा उनमें विलीन हो जाती हैं।

अवधारणात्मक ढाँचा

एकतावाद वह विचारधारा है जो मानती है कि भारत एक सनातन सभ्यतामूलक इकाई है। इसके मूल तत्त्व निम्नलिखित हैं: प्रथमतः, एकतावाद यह स्वीकार करता है कि भाषा, वेश-भूषा, खान-पान और पूजा-पद्धति की बाह्य विविधता के पीछे एक समान सांस्कृतिक चेतना विद्यमान है। जिस प्रकार नदियाँ अलग-अलग दिशाओं से आकर सागर में मिलती हैं, उसी प्रकार भारत की सभी परंपराएं एक ही सनातन स्रोत की शाखाएं हैं। द्वितीयतः, एकतावाद यूरोपीय सभ्यता की श्रेष्ठता को अस्वीकार करता है। यह व्हाइटमेन बर्डन (White Man's Burden) सिद्धांत को उपनिवेशवाद का वैचारिक औजार मानता है। इसके अनुसार भारत को अपने विकास के लिए पश्चिम की नकल करने की आवश्यकता नहीं, बल्कि अपनी प्राचीन ज्ञान-परंपरा और सभ्यतागत मूल्यों से प्रेरणा लेनी चाहिए। तृतीयतः, एकतावाद सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को केंद्रीय महत्त्व देता है। राष्ट्र केवल भूमि और संविधान का समुच्चय नहीं है, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक-आध्यात्मिक सत्ता है जिसकी अभिव्यक्ति राजनीतिक जीवन में होनी चाहिए।

अनेकतावाद वह विचारधारा है जो भारत को एक बहुलवादी भौगोलिक और राजनीतिक इकाई मानती है। इसके मूल तत्त्व इस प्रकार हैं: प्रथमतः, अनेकतावाद यह मानता है कि भारत में अनेकता ही मौलिक है और एकता ऊपरी या राजनीतिक है। यहाँ विभिन्न धर्म, भाषाएं, नृजातीय समूह और सामाजिक परंपराएं समान रूप से वैध हैं। राज्य का दायित्व इस बहुलता को संरक्षित और पोषित करना है। द्वितीयतः, अनेकतावाद पंथनिरपेक्षता को सर्वोच्च राजनीतिक मूल्य मानता है। धर्म को सार्वजनिक जीवन से पृथक् रखकर आधुनिक राज्य की स्थापना इसकी मूल माँग है। यह उस यूरोपीय ज्ञानोदय (Enlightenment) की परंपरा से प्रेरित है जिसने धर्म-आधारित राज्य का विरोध किया था। तृतीयतः, अनेकतावाद का मानना है कि ब्रिटिश शासन ने, अपनी सीमाओं के बावजूद, भारत में आधुनिक संस्थाओं, कानूनी व्यवस्था और शिक्षा की नींव रखी। इस विचारधारा के अनुसार आज के भारत को पश्चिमी उदार लोकतंत्र और मानवाधिकार मूल्यों को आत्मसात् करना चाहिए।

साहित्य समीक्षा

भारतीय राजनीतिक विचारधाराओं पर व्यापक शोध हुआ है, यद्यपि एकतावाद-अनेकतावाद के इस विशिष्ट अवधारणात्मक ढाँचे का उपयोग नवीन है। पूर्ववर्ती अध्येताओं ने इस द्वंद्व को अन्य नामों से परिभाषित किया है।

रजनी कोठारी (1970) ने अपनी महत्त्वपूर्ण कृति 'Politics in India' में भारतीय दलीय व्यवस्था को 'एक-दल प्रभुत्व' (One Party Dominance) की अवधारणा से समझाया। उनके विश्लेषण में कांग्रेस एक 'छाता संगठन' (Umbrella Organization) था जो विविध विचारधाराओं को समाहित करता था। यह एकतावाद-अनेकतावाद के संघर्ष की प्रारंभिक झलक है।

पार्थ चटर्जी (1986) ने अपनी पुस्तक 'Nationalist Thought and the Colonial World' में राष्ट्रवादी विचार को उपनिवेशवाद के प्रतिरोध के रूप में देखा। उन्होंने 'भौतिक' और 'आध्यात्मिक' क्षेत्रों के बीच के तनाव को रेखांकित किया जो एकतावाद और अनेकतावाद के बीच के तनाव से साम्य रखता है।

क्रिस्टोफ जेफ्रलॉ (2007) ने 'The Hindu Nationalist Movement in India' में हिंदुत्व विचारधारा का विस्तृत विश्लेषण किया। उनकी दृष्टि में एकतावाद की राजनीतिक अभिव्यक्ति हिंदुत्व के रूप में हुई। यद्यपि जेफ्रलॉ

ने इस विचारधारा की आलोचना की है, परंतु उनका विश्लेषण इसके ऐतिहासिक स्रोतों को समझने में सहायक है।

सुनील खिलनानी (1997) ने 'The Idea of India' में नेहरूवादी भारत की परियोजना को एक 'आधुनिकतावादी' परियोजना के रूप में प्रस्तुत किया जो अनेकतावाद के निकट है। उनके अनुसार भारतीय राज्य की नींव पश्चिमी उदारवादी मूल्यों पर आधारित है।

ये सभी विद्वान् भारतीय राजनीति के किसी न किसी पक्ष को उजागर करते हैं, परंतु एकतावाद-अनेकतावाद का यह समेकित ढाँचा इन सभी को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करता है।

शोध प्रश्न

इस शोध पत्र में निम्नलिखित प्रमुख शोध प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास किया गया है:

(1) एकतावाद और अनेकतावाद का वैचारिक उद्भव 19वीं शताब्दी में किन ऐतिहासिक-सामाजिक परिस्थितियों में हुआ?
(2) स्वतंत्रता के बाद के भारत में इन विचारधाराओं का समकालीन स्वरूप क्या है?

परिकल्पनाएं

H1: एकतावाद और अनेकतावाद भारत के औपनिवेशिक अनुभव की दो भिन्न वैचारिक प्रतिक्रियाएं हैं जो आज भी समान रूप से प्रासंगिक हैं।

H2: भारतीय संविधान और राज्य-संस्थाएं मूलतः अनेकतावादी मूल्यों पर आधारित हैं, परंतु एकतावाद ने समय-समय पर उन्हें चुनौती दी है।

एकतावाद का ऐतिहासिक विकास

एकतावाद का बीजारोपण 19वीं शताब्दी में उस वैचारिक प्रतिक्रिया के रूप में हुआ जो पश्चिमी सांस्कृतिक वर्चस्व के विरुद्ध उठी। इस धारा के दो सर्वप्रमुख प्रवक्ता थे - स्वामी दयानंद सरस्वती और स्वामी विवेकानंद।

स्वामी दयानंद सरस्वती (1824-1883) ने आर्य समाज की स्थापना कर वैदिक धर्म की श्रेष्ठता का उद्घोष किया। उनका 'वेदों की ओर लौटो' (Back to the Vedas) का नारा न केवल धार्मिक था, बल्कि राजनीतिक भी था। दयानंद ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने और स्वदेशी विचारों को प्राथमिकता देने पर जोर दिया। उनके मतानुसार भारत की पतनावस्था का कारण पश्चिमी अनुकरण नहीं, बल्कि स्वयं की प्राचीन परंपरा से विमुखता है।

स्वामी विवेकानंद (1863-1902) ने 1893 में शिकागो धर्म संसद में हिंदू दर्शन की सार्वभौमिकता का उद्घोष करके एकतावाद को वैश्विक मंच प्रदान किया। उन्होंने वेदांत के आधार पर यह सिद्ध किया कि भारत की आध्यात्मिक परंपरा न केवल हिंदुओं के लिए, बल्कि समस्त मानवता के लिए मूल्यवान है। विवेकानंद ने 'गरीब नारायण' की सेवा को राष्ट्र-सेवा के रूप में परिभाषित करते हुए एकतावाद को सामाजिक क्रांति का आधार भी बनाया।

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद, 1907 के सूरत विभाजन से पूर्व ही इसमें दो स्पष्ट धाराएं उभर चुकी थीं। गरम दल, जिसके प्रमुख नेता बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय और बिपिन चंद्र पाल (लाल-बाल-पाल) थे, एकतावाद का राजनीतिक प्रतिनिधित्व करता था।

बाल गंगाधर तिलक (1856-1920) ने गणपति उत्सव और शिवाजी महोत्सव को राजनीतिक जागरण के माध्यम के रूप में प्रयोग किया। उनका यह कदम एकतावादी राजनीति का क्लासिक उदाहरण है - धार्मिक-सांस्कृतिक

प्रतीकों का उपयोग राष्ट्रीय एकता के निर्माण के लिए। तिलक ने 'स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' की घोषणा कर ब्रिटिश उपनिवेशवाद को सीधी चुनौती दी।

अरविंद घोष ने दर्शन और राजनीति के समन्वय से एकतावाद को गहरी आध्यात्मिक नींव दी। उनका 'योग और राष्ट्रवाद' का विचार भारतीय राजनीतिक चिंतन में एकतावाद का दार्शनिक उत्कर्ष है।

1923 में विनायक दामोदर सावरकर ने 'हिंदुत्व' की अवधारणा प्रतिपादित की जो एकतावाद की सर्वाधिक स्पष्ट राजनीतिक अभिव्यक्ति है। उनके अनुसार जो व्यक्ति भारत को अपनी पितृभूमि और पुण्यभूमि दोनों मानता है, वह हिंदू है - चाहे उसका धर्म कोई भी हो।

1925 में डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS) की स्थापना की। संघ ने एकतावाद को एक संगठनात्मक ढाँचे में परिवर्तित किया। संघ का उद्देश्य हिंदू समाज की एकता और संगठन था जो एकतावादी सोच का व्यावहारिक प्रतिफलन है।

अनेकतावाद का ऐतिहासिक विकास

अनेकतावाद की वैचारिक नींव राजा राममोहन राय (1772-1833) के चिंतन में मिलती है। राय ने पश्चिमी शिक्षा, तार्किकता और उदारवाद को भारतीय समाज के उत्थान का मार्ग माना। उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना कर एक ऐसे धर्म की कल्पना की जो सभी पंथों के सार को आत्मसात् करे। उनके विचारों में औपनिवेशिक शासन के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण था - वे मानते थे कि अंग्रेजी शिक्षा भारतीय समाज की कुरीतियों को दूर करने में सहायक होगी।

राय की इस परंपरा को महादेव गोविंद रानाडे, केशवचंद्र सेन और गोपाल कृष्ण गोखले ने आगे बढ़ाया। गोखले (1866-1915) कांग्रेस के नरम दल के सर्वप्रमुख नेता थे जो ब्रिटिश संस्थाओं के भीतर काम करते हुए क्रमिक सुधार में विश्वास करते थे।

स्वतंत्र भारत में जवाहरलाल नेहरू (1889-1964) ने अनेकतावाद को एक व्यापक राज्य-परियोजना का रूप दिया। नेहरू का 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' उनके अनेकतावादी विचार का दार्शनिक आधार है जहाँ वे भारत को 'अनेकताओं की एकता' के रूप में देखते हैं, परंतु यह एकता सांस्कृतिक नहीं, राजनीतिक और भावनात्मक है।

नेहरू ने पंथनिरपेक्षता को संविधान का आधारभूत मूल्य बनाया। वैज्ञानिक दृष्टिकोण, समाजवाद और आधुनिकता उनकी नीतियों के स्तम्भ थे। उन्होंने कांग्रेस को एक 'सतरंगी' (Rainbow) संगठन बनाया जो दक्षिणपंथ से लेकर वामपंथ तक सभी विचारधाराओं को समाहित करे।

इंदिरा गांधी के काल (1966-1984) में यह समन्वय कमजोर पड़ने लगा। 1975 का आपातकाल, 1977 में जनता पार्टी का उदय और 1980 के दशक में एकतावादी शक्तियों का पुनरुत्थान - ये सब इस बात के संकेत थे कि नेहरूवादी अनेकतावाद की नींव कमजोर हो रही थी।

तुलनात्मक विश्लेषण

दोनों विचारधाराओं की तुलनात्मक समझ के लिए निम्न सारणी उपयोगी है:

पहलू	एकतावाद	अनेकतावाद
राष्ट्र की अवधारणा	सभ्यतामूलक, सांस्कृतिक इकाई	भौगोलिक-राजनीतिक अभिव्यक्ति

एकता का आधार	सनातन धर्म और संस्कृति	संविधान और कानून
पश्चिम के प्रति दृष्टि	आलोचनात्मक, स्वाभिमानी	ग्रहणशील, प्रेरणादायक
धर्म की भूमिका	सार्वजनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण	निजी क्षेत्र तक सीमित
राष्ट्रवाद का प्रकार	सांस्कृतिक राष्ट्रवाद	नागरिक/उदार राष्ट्रवाद
19वीं सदी के प्रतिनिधि	दयानंद, विवेकानंद, तिलक	राममोहन राय, गोखले, नरमपंथी
स्वातंत्र्योत्तर प्रतिनिधि	RSS, जनसंघ, भाजपा	कांग्रेस, वामदल, उदारवादी
समकालीन राजनीतिक दल	भारतीय जनता पार्टी	भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस
अकादमिक स्थिति	अपेक्षाकृत कम प्रतिनिधित्व	विश्वविद्यालयों में अधिक प्रभावी

कांग्रेस में दोनों विचारधाराओं का संघर्ष

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का इतिहास वास्तव में एकतावाद और अनेकतावाद के बीच के संघर्ष और समन्वय का इतिहास है। 1885 से 1947 तक के 62 वर्षों में इस संगठन के भीतर ये दो धाराएं सतत रूप से क्रियाशील रहीं।

महात्मा गांधी (1869-1948) ने इन दोनों विचारधाराओं के बीच एक अद्भुत समन्वय स्थापित किया। एक ओर उन्होंने हिंदू प्रतीकों, रामराज्य की अवधारणा और धार्मिक भाषा का उपयोग करके जनमानस को आंदोलित किया जो एकतावाद के निकट था; दूसरी ओर उन्होंने सर्वधर्म समभाव, अहिंसा और मानवीय गरिमा को सार्वभौमिक मूल्य माना जो अनेकतावाद के अनुकूल था। गांधी जी कई वर्षों तक इस समन्वय को बनाए रखने में सफल रहे।

नेहरू ने कांग्रेस को अपने नेतृत्व में एक 'सतरंगी संगठन' के रूप में बनाए रखा। उन्होंने पुरुषोत्तमदास टंडन जैसे एकतावादी नेताओं को दरकिनार किया और कांग्रेस को अनेकतावादी दिशा में ले गए। नेहरू ने भारतीय समाजवाद का एक विशिष्ट रूप विकसित किया जिसमें पश्चिमी उदारवाद, फेबियन समाजवाद और भारतीय लोकतांत्रिक परंपरा का मिश्रण था।

इंदिरा गांधी के काल में कांग्रेस का वैचारिक ढाँचा कमजोर पड़ा। 1984 के बाद कांग्रेस धीरे-धीरे एकतावादी मतदाताओं को खोने लगी। इस रिक्तता को भारतीय जनता पार्टी ने भरा, जो 1980 में जनता पार्टी के विभाजन के बाद अस्तित्व में आई थी।

साम्यवाद और समाजवाद

भारत में साम्यवाद का आगमन 1920 के दशक में हुआ जब भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना (1920/1925) हुई। साम्यवाद एक स्वतंत्र विचारधारा के रूप में प्रारंभ हुआ, परंतु समय के साथ यह अनेकतावाद में विलीन होता गया।

इस विलय के कारण स्पष्ट हैं: दोनों विचारधाराएं धर्म को संदेह की दृष्टि से देखती हैं - साम्यवाद इसे 'अफीम' कहता है, अनेकतावाद इसे निजी क्षेत्र तक सीमित रखना चाहता है। दोनों पश्चिमी आधुनिकता को प्रगति का मानदंड मानती हैं। आज वामदल और 'INDIA Alliance' में अनेकतावादी दलों का गठबंधन इस विलय का ठोस राजनीतिक प्रमाण है।

जातिवाद

जातिवाद भारतीय राजनीति की एक स्वतंत्र धुरी है जो दोनों विचारधाराओं के लिए चुनौती और अवसर दोनों है। ऐतिहासिक रूप से जातिवाद दोनों विचारधाराओं से असहज संबंध में रहा है।

एकतावाद की दृष्टि से जाति एक सामाजिक विकृति है जो भारतीय सांस्कृतिक एकता को खंडित करती है। इसीलिए आर एस एस ने सदैव 'जाति-विहीन हिंदू समाज' का आदर्श प्रस्तुत किया। दूसरी ओर, अनेकतावाद जातीय अस्मिताओं को भारत की बहुलता का अंग मानता है और उनके संरक्षण को सकारात्मक भेदभाव (Affirmative Action) के माध्यम से न्यायसंगत ठहराता है।

वर्तमान में अनेकतावादी विचारधारा जातिवाद को अपनी राजनीतिक रणनीति में समाहित करने में लगी है। जाति जनगणना की मांग, ओ.बी.सी./ई.बी.सी. आरक्षण का विस्तार और SECC-2011 को सार्वजनिक करने की मांग ये सब अनेकतावाद और जातिवाद के नए गठजोड़ की अभिव्यक्ति हैं।

क्षेत्रवाद

क्षेत्रवाद दोनों मुख्य विचारधाराओं के लिए एक समान चुनौती है। दोनों ही 'सीमित क्षेत्रवाद' अर्थात् क्षेत्रीय भाषाओं, संस्कृतियों और विकासात्मक आकांक्षाओं का सम्मान को स्वीकार करती हैं। परंतु 'प्रबल क्षेत्रवाद' जो राष्ट्रीय एकता को चुनौती दे, उसे दोनों ही दबाने का प्रयास करती हैं।

द्रविड़ आंदोलन, तेलंगाना आंदोलन, कश्मीर समस्या और पूर्वोत्तर के अलगाववाद ये सब क्षेत्रवाद के वे रूप हैं जिनसे दोनों विचारधाराओं को टकराना पड़ा है। यद्यपि इन समस्याओं के समाधान की रणनीति दोनों की भिन्न-भिन्न है।

समकालीन राजनीतिक परिदृश्य

1992 में अयोध्या के विवादित ढाँचे के ध्वंस ने भारतीय राजनीति में एक नया अध्याय खोला। यह घटना एकतावाद की राजनीतिक शक्ति का प्रदर्शन था। 1996 में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में भाजपा पहली बार सत्ता में आई (यद्यपि केवल 13 दिनों के लिए), और 1998 में उन्होंने स्थिर सरकार बनाई।

2014 में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा को ऐतिहासिक बहुमत मिला। यह एकतावाद की निर्णायक राजनीतिक विजय थी। 2019 में पुनः और 2024 में एनडीए के रूप में भाजपा की सरकार बनना एकतावाद की दीर्घकालिक राजनीतिक सफलता को रेखांकित करता है। नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019, धारा 370 की समाप्ति और राम मंदिर निर्माण ये एकतावाद की नीतिगत अभिव्यक्तियाँ हैं।

राजनीतिक मैदान में अनेकतावाद के कमजोर होने के बावजूद, यह विचारधारा जड़ से उखड़ी नहीं है। कांग्रेस, आम आदमी पार्टी, तृणमूल कांग्रेस, समाजवादी पार्टी, आरजेडी जैसे दलों का 'INDIA Alliance' अनेकतावाद का समकालीन राजनीतिक रूप है।

2024 के लोकसभा चुनावों में विपक्षी गठबंधन ने अपेक्षा से अधिक सीटें जीतकर यह सिद्ध किया कि अनेकतावाद की राजनीतिक शक्ति अभी भी महत्त्वपूर्ण है। जाति-आधारित राजनीति, संविधान-रक्षा का नारा और अल्पसंख्यक राजनीति ये अनेकतावाद के नए राजनीतिक हथियार हैं।

यह ध्यातव्य है कि राजनीतिक स्तर पर एकतावाद की विजय के बावजूद, अकादमिक क्षेत्र और सिनेमा में अनेकतावाद का वर्चस्व बना हुआ है। यह भारतीय लोकतंत्र की एक विशिष्ट और विडंबनापूर्ण स्थिति है।

विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में - विशेषकर जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, हैदराबाद विश्वविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय और अन्य केंद्रीय विश्वविद्यालयों में - अनेकतावादी विचारधारा का प्रभुत्व है। सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रमों में पश्चिमी उदारवादी, मार्क्सवादी और उत्तर-औपनिवेशिक सिद्धांतों का बोलबाला है। एकतावाद को अकादमिक जगत में प्रायः 'हिंदुत्व', 'दक्षिणपंथी' या 'प्रतिगामी' कहकर हाशिये पर रखा जाता है।

बॉलीवुड सिनेमा में भी अनेकतावादी विचारधारा की स्पष्ट छाप दिखती है। भारतीय इतिहास, धर्म और संस्कृति को जिस प्रकार फिल्मों में प्रस्तुत किया जाता है, उसमें प्रायः अनेकतावादी दृष्टिकोण हावी रहता है। हाल के वर्षों में 'धुरंधर' 'द केरला स्टोरी', 'द कश्मीर फाइल्स', 'सम्राट पृथ्वीराज' जैसी फिल्में एकतावादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हैं, परंतु ये अब भी बॉलीवुड में अपवाद हैं, नियम नहीं।

मीडिया में यह ध्रुवीकरण और भी स्पष्ट है। राष्ट्रीय स्तर पर अधिकांश अंग्रेजी मीडिया अनेकतावाद के पक्षधर हैं, जबकि हिंदी और क्षेत्रीय भाषा मीडिया में एकतावाद का अधिक प्रतिनिधित्व है। यह विभाजन भारत में भाषाई और वर्गीय विभाजन से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

एकतावाद की शक्तियाँ: यह भारत की सभ्यतागत निरंतरता और सांस्कृतिक गर्व को पोषित करता है। यह उपनिवेशवाद के मनोवैज्ञानिक अवशेषों को दूर करने में सक्षम है। यह व्यापक जन-आधार वाली राजनीति का आधार बन सकता है। यह भारत की मौलिक पहचान को संरक्षित करने का प्रयास करता है।

अनेकतावाद की शक्तियाँ: यह भारत की वास्तविक सामाजिक विविधता को स्वीकार करता है। यह अल्पसंख्यकों और हाशिये के समूहों की सुरक्षा सुनिश्चित करने पर जोर देता है। यह आधुनिक लोकतांत्रिक मूल्यों के साथ अधिक सामंजस्यपूर्ण है।

एकतावाद की सीमाएं: इसमें भारत की वास्तविक सामाजिक विविधता को नकारने का जोखिम है। धार्मिक अल्पसंख्यकों और दलितों के हित कभी-कभी इस विचारधारा में पर्याप्त स्थान नहीं पाते। इसके कुछ रूपों में बहुसंख्यकवाद (Majoritarianism) की प्रवृत्ति हो सकती है।

अनेकतावाद की सीमाएं: यह कभी-कभी भारत की सभ्यतागत पहचान को नकारने की प्रवृत्ति दिखाता है। इसका अत्यधिक पश्चिमी-उन्मुखीकरण कभी-कभी भारतीय समाज से कट जाता है। वोट-बैंक राजनीति के लिए इसका दुरुपयोग हो सकता है।

निष्कर्ष

एकतावाद और अनेकतावाद - ये दोनों विचारधाराएं भारतीय राजनीतिक जीवन की दो अनिवार्य धाराएं हैं। ये एक-दूसरे की विरोधी होते हुए भी एक-दूसरे की पूरक हैं। जिस प्रकार नदी के दोनों तट उसे दिशा देते हैं, उसी प्रकार ये दोनों विचारधाराएं भारतीय लोकतंत्र की नदी को आकार देती हैं। इतिहास यह सिद्ध करता है कि जब एकतावाद

का अत्यधिक उभार होता है तो वह अल्पसंख्यकों के लिए असहज स्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है; और जब अनेकतावाद अत्यधिक बलवान होता है तो वह भारत की सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीय स्वाभिमान को कमजोर कर सकता है। भारतीय लोकतंत्र की दीर्घकालिक सफलता इन दोनों विचारधाराओं के बीच एक उत्पादक संवाद और संतुलन पर निर्भर है।

गांधी जी का प्रयोग सर्वाधिक सफल था क्योंकि उन्होंने दोनों को एक उच्चतर संश्लेषण में ढालने का प्रयास किया। आज भी यदि भारतीय राजनीति में ऐसा संश्लेषण संभव हो सके - जो भारत की सांस्कृतिक गरिमा को स्वीकार करे और साथ ही हर नागरिक के अधिकारों की रक्षा करे - तो वह भारत को 21वीं शताब्दी की वैश्विक शक्ति के रूप में स्थापित कर सकता है। अंतिम रूप से यह कहा जा सकता है कि विचारधारा कभी मरती नहीं। एकतावाद और अनेकतावाद दोनों ही अपने-अपने रूप में जीवित हैं, संघर्षरत हैं और परिवर्तनशील हैं। यही भारतीय लोकतंत्र की गतिशीलता का प्रमाण है।

संदर्भ सूची

1. गोलवलकर, एम.एस. (1939). हम या हमारे राष्ट्रीयता की परिभाषा, भारत प्रकाशन, नागपुर.
2. भारतीय संविधान सभा की बहसें (1946-1949). भारत सरकार प्रकाशन.
3. शर्मा, महेंद्र प्रसाद (2001) भारतीय राजनीतिक विचारधारा। साहित्य भवन, आगरा।
4. द्विवेदी, एस.एल. (2005) भारतीय राजनीतिः विचारधारा और व्यवहार। विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
5. पाण्डेय, राम शकल (2008) स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रीय विचारधारा। केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।
6. शुक्ल, विजय कुमार (2015) भारत में राष्ट्रवाद की विचारधारा। प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. कोठारी, रजनी (1970). भारत में राजनीति, ओरियंट लॉन्गमैन, नई दिल्ली.
8. नेहरू, जवाहरलाल (1946). भारत की खोज. मेरेडियन बुक्स, लंदन.
9. तिलक, बालगंगाधर (1920). गीतारहस्य.लोकमान्य तिलक मंदिर, पुणे.
10. सावरकर, वी.डी. (1923). हिंदुत्व : हिन्दू कौन है? स्वतंत्र चिंता प्रकाशन, पुणे.
11. विवेकानंद, स्वामी (1893). स्वामी विवेकानंद का संपूर्ण कार्य (Vol. 1-9). अद्वैत आश्रम, कोलकाता.
12. गांधी, एम के. (1927). आत्मकथा 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग'. नवजीवन पब्लिकेशन हाउस, अहमदाबाद
13. Chatterjee, Partha (1986). Nationalist Thought and the Colonial World: A Derivative Discourse. Zed Books, London.
14. Jaffrelot, Christophe (2007). Hindu Nationalism: A Reader. Princeton University Press.
15. Khilnani, Sunil (1997). The Idea of India. Farrar, Straus and Giroux, New York.
16. Brass, Paul R. (1990). The Politics of India since Independence. Cambridge University Press.
17. Dayal, John & Bose, Ajoy (1977). For Reasons of State: Delhi Under Emergency. Ess Ess Publications, New Delhi.
18. Roy, Ram Mohan (1820). The Precepts of Jesus: Guide to Peace and Happiness. London Mission Press, Calcutta.
19. Gokhale, G.K. (1916). Speeches of Gopal Krishna Gokhale. Ganesh & Co., Madras.